International Journal of Research in Hindi
www.hindijournal.in
ISSN: 2582-3493
Received: 05-05-2025, Accepted: 06-06-2025, Published: 20-03-2025
Volume 7, Issue 1, 2025, Page No. 22-23

दलित विमर्श : जूठन एक आत्मकथा

डॉ. सराजेनी कोशले
अतिथि व्याख्याता, हिन्दी शासकीय नवीन महाविद्यालय. जाजंगीर चाम्पा, छत्तीसगढ़, भारत

सारांश
दलित साहित्य मे आत्मकथाएँ सबसे अधिक चर्चा का विषय रहा है, दलित आत्मकथाएं हमें यथार्थ से अवगत कराती है। 'जूठन' ओमप्रकाश वाल्मिकी जी की अत्यधिक चर्चित आत्मकथा है, जो वाल्मीकि जी के समाज सेभोगेहुए सत्यार्थ का प्रामाणिक दस्तावेज है। 'जूठन' आत्मकथा केवल वाल्मीकि जी की आत्मकथा नही है, बल्कि पूरे दलित समाज की यातना, पीड़ा, सघंर्ष तथा समस्याओ को उजागर करने वाली कृति है।

मूल शब्दः चुहड़े, अछूत, झाड़ू, जूठन, छुआछतू, धिक्कार, अपेक्षित, नकारा। दलित साहित्य को समझने से पहले दलित को समझना होगा। समाज मे दलित वर्ग में रखे हुए लोगों के बारे में जानना होगा। दलित एक शब्द है जिसका उपयागे उन लोगो के लिए किया जाता है, जिन्हे भारत मे जाति व्यवस्था के सबसे निचले स्तर पर वर्गीकृत किया गया है, और वे सदियों से भेदभाव और सामाजिक बहिष्कार का सामना करते आए हैं।

दलित साहित्य एक भारतीय साहित्य की विधा है, जिसमे दलित समुदाय के अनुभवों, सघंर्षों और जीवन मे मिले कष्टों कोतथा जातिगत उत्पीड़न और भेदभाव के खिलाफ आवाज को उठाता है। यह विभिन्न भाषाओं मे रचा जाता है और कविता, कहानी, आत्मकथा जैसी विभिन्न साहित्यिक रूपों में शामिल रहता है।

दलित साहित्य के आरंभ मे दलित आत्मकथाएं सर्वाधिक चर्चा के केन्द्र बिन्दु मे रही, दलित आत्मकथाएं यथार्थ का आइना है। अब तक बहुत सारी आत्मकथाएं आ चुकी है– ओमप्रकाश जी के 'जूठन' (1997),'जूठन खण्ड–2' (2015) कौशल्या बेसन्नी की 'दाहेरा अभिशाप' (1999), की 'झापेड़ी सेराजभवन तक' सरूजपाल चौहान की तिरस्कृत' (2003) रूप नारायण सानेकर की 'नागफनी' (2009) डॉ. श्यारोजसिहं बैचेन की 'मेरा बचपन मेरे कंधों पर (2009) डॉ. तुलसीराम की मुदर्हिया (2010), धर्मवीर की मेरी पत्नी और भेड़िया' (2011) आदि आत्मकथाओं ने दलित समाज के प्रति नये सिरे सेसोचने के लिए साहित्यिक समाज कोप्रेरित किया है।

'जूठन' ओमप्रकाश वाल्मिकि जी की अत्यधिक चर्चित आत्मकथा है। जिसके मूल मे वाल्मिकि समाज की आत्मकथा है। यह वाल्मीकि जी के द्वारा खुद भोगेहुए यथार्थ है। समाज मे किस प्रकार उनके साथ भेदभाव किया तथा उसे उपेक्षित वर्ग समझेइनके आत्मकथा 'जूठन' सेमहससू होता है कि किस प्रकार किसी जीते जागते इंसान को जानवर की श्रेणी में रखकर उसको अपमानित किया जाता है। आत्मकथा पूरे दलित समाज के यथार्थ को दर्शाती है और पाठक के दिल कोद्रवित कर देती है। 'जूठन' आत्मकथा का दूसरी भाषा मे भी अनुवाद हुआ है। पंजाबी मे अनुवादकर्ता श्री द्वारका भारती के लिए यह आत्मकथा है ''एक साहित्यिक कृति या कलाकृति नही अपितु एक विलाप'' 'लम्बी चीख' 'नर्म हृदय बिंधने वाला' तथा वेदना का दरिया' बहाने वाली कथा है।' 'जूठन' आत्मकथा का केन्द्र लखेक का अपना गावं बरला है, जहां लखेक रहता था। उस मोहल्ला को 'दब्बोवाली जाहेड़ी' से जाना जाता था, वह मोहल्ला टूटी–फूटी गंदी झोपड़ीयों से बना हुआ था वहीं वाल्मीकि नामक समाज रहता था। तंग गलियां, भौंकते हुए कुत्ते, गुर्राते हुए सुअर, नंग धड़ंग बच्चे यही इस मोहल्ले की दृश्य थी। यहां के लोगो को इंसान नहीं चूहड़े कहकर बुलाया जाता था, बच्चों को स्कूल जाना मना था। इसी बस्ती मे ओमप्रकाश जी का परिवार रहता था। परिवार मे दो भाई और बहन तथा माता–पिता व भाभी रहते थे। शुरूवात मे एक रामसेवक नामक इसाई पादरी भंगी बच्चों को पढ़ाते थे। किन्तु ज्यादा दिन नहीं पढ़ाये ओमप्रकाश के पिता ने ओमप्रकाश जी को सरकारी स्कूल मे पढ़ने भजे लेकिन यहां अदतू बच्चों को अलग बैठाया जाता था। उनका हैण्डपम्प अलग होता उन्हें मारा–पिटा जाता था। और पढ़ाई के नाम पर मास्टर उनको केवल गाली–गलौच करता था, और काम करवाया जाता। पहले दिन लखेक को झाड़ू लगाने को कहा गया। दूसरे तीसरे दिन भी झाड़ू लगवाते है। लखेक के पिता एक दिन वहां से गुजरते वक्त देखा और गुस्से में आकर झाड़ू दूर फेकं देते हैं और खींजते हुए कहते हैं – "कोण–सा मास्टर है वो द्रोणाचार्य की औलाद, जो मेरे लड़के से झाड़ू लगवाते है। यहां पिता में दलित चेतना का स्वर देखने कोमिलता है। लेकिन ज्यादा कुछ नही कर पाते बल्कि और लखेक को सुनाया जाता है। लेखक के पिता की आवाज को सुनकर हडेमास्टर कलीराम गाली देकर धमकाते है। लेकिन पिता पर उनकी धमकी का असर नहीं पड़ता है और वह कहता है – "मास्टर हो..... इसलिए जा रहा हूं पर इतना याद रखिए मास्टर..... यों चूहड़े का यहीं पढ़ेगा ..... इसी मदरसे में और यों ही नहीं इसके बाद और भी आवेंगे पढ़ने कू"[3]

वाल्मीकि जी अपने घर आठवीं कक्षा तक पहुंचते–पहुंचते प्रेमचन्द्र और शरतचन्द्र के उपन्यास पढ़ने लगता है। धारे–धीरे जैसे–तैसे गरीबी में स्कूल की पढ़ाई पूरी करके वह त्यागी इंटर कॉलेज मे पहुंच जाता है। वाल्मीकि जी के जीवन मे यहां एक नया मोड़ आता है। जहां एक नयी सुबह दिखाई देती है। किंतु लखेक के दिल और दिमाग में वे सारी पुरानी बाते अंकित है–

ओमप्रकाश जी के मां सवर्णों के घर साफ–सफाई का काम करने जाती थी, शादी ब्याह मे ये लोग सवर्णों के घर सुबह सेशाम तक जानवर की तरह काम करते थे लेकिन बदले में मिलती थी "जूठन" ये लोग जूठन कोही अपनी कमाई समझ लते हैं, एक दिन लेखक की मां ने सुखदेव सिंह जो गावं की मुखिया होता है, की लडकी की शादी में उनसे एक पत्तल खाने देने को कहती है, तो सुखदेव सिंह लखेक की मॉ को फटकारते हुए उसकी औकात बतलायी और चले जाने को कहते हैं, तभी लखेक की मॉ सुखदेव सिहं से कहती है– "इसे थाके अपने घर में धर ले, कल तड़के बरातीयों को नाश्ते मे खिला देना....."[4] यहां पर भी मॉ द्वारा दलित चेतना का स्वर देखने को मिलता है। उसी घटना के बाद "जूठन" उठाने और लेना बंद हो जाता है।

वाल्मीकि जी का दसवीं की बोर्ड की परीक्षा, अपनी जाति के वे पहले लडक़े थे जो हाईस्कूल की परीक्षा दे रहा था। गणित के पेपर से पहले एक दिन तैयारी के लिए मिला था। जब वह अपने घर पर पढ़ाई कर रहे तभी फौज सिंह त्यागी लेखक को अपने खेत में ईख लाने के लिए कहता है, लखेक अपनी परीक्षा की बात कहता है फिर भी उसे जबरदस्ती खेत मे लेजाकर काम कराने लगते हैं, दोपहर को त्यागी की मां खाना लाती है और लेखक को उपर से रोटी देती है तो वो उस रोटी को नहीं खाता है और लखेक खुद कहता है "मैंने वो रोटियां उनके सामने फेकं दी और घर की ओर दौड़ पड़ा। "[5] यहां पर लेखक के द्वारा दलित चेतना देखने को मिलता है। जो समाज के जाति व्यवस्था की भेद को मिटाना चाहता है। परन्तु ऐसा नहीं हो पाता है।

इस प्रकार अनके यातना और पीड़ाओं को सहते हुए लेखक अपने आगे की पढ़ाई के लिए देहरादून जाते हैं, इस समाज का यह पहला इंसान था जो एक बड़ी कॉलजे में प्रवेश पाता है। यहां उसने जोफैक्टरी प्रशिक्षण लिया और उसकी प्रतियोगिता परीक्षा पास करके उच्च शिक्षा के लिए जबलपुर और जबलपुर से बम्बई जाना पड़ता है। बम्बई में वाल्मीकि जी को एक विशाल पुस्तकालय मिलता है, जहां देश–विदेश के लखेकों का साहित्य पढ़ा और अपनी एक अलग विचारधारा बनाया और व्यक्तित्व का विकास किया। किसी काम से लखेक को महाराष्ट्र के किसी दूसरे शहर जाना पड़ा जहा लेखक के मित्र ने एक कुलकर्णी परिवार की बेटी सविता का लखेक के प्रति लगाव था। वे लोग वाल्मीकि सरनेम कोब्राम्हण जाति का समझने लगे थे बाद मे जब लखेक को पता चलता है कि सविता मे जातिगत दलित लागो सेघृणा करती है, वाल्मीकि जी अपने जाति के बारे में बता देते हैं। इस प्रकार आत्मकथा के अतं मे लखेक अपनी पहचान को दृढ़ करता हुआ इस नतीजे पर पहुंचता है कि "जाति भारतीय समाज मे सबसे बड़ा घटक है, जाति पैदा होतेही व्यक्ति की नियति तय कर देती है पैदा होना व्यक्ति के अधिकार में नहीं होतो मैं भगी के घर पैदा क्यो हातेा।"[6]

निष्कर्ष

निष्कर्ष में यह कह सकते है कि "जूठन" एक व्यक्ति की आत्मकथा होकर भी यह पूरे दलित जीवन की नारकीय यातना, दलित जीवन की समस्या, देश, सघंर्ष को अभिव्यक्त करने वाली रचना है। जिसमे अतीत की पीड़ाएं वर्तमान का ज्वलतं यथार्थ है और भविष्य के सपने है। आज भारतीय समाज का आजादी इतने साल हाने के बावजूद भी यहां सामाजिक साचे से आजादी नही मिल पायी है। कैसे लोगों के द्वारा बनाया गया जाति व्यवस्था मे ला गे के साथ ही भेदभाव करता ह। और अपने मानसिक साचे कोबदलना नही चाहता है। क्या ईश्वर की रचनाओं को भेदभाव के साथ देखना उचित होगा।

संदर्भ सूचि

1. डॉ ललिता कौशल "चर्चित हिन्दी की दलित आत्मकथाएं। (1998) राजकमल प्रकाशन, कालेकाता
2. ओमप्रकाश वाल्मीकि "जूठन" (1997) राधा कृष्णन प्रकाशन, नई दिल्ली
3. ओमप्रकाश वाल्मीकि "जूठन" (1997) राधा कृष्णन प्रकाशन, नई दिल्ली
4. ओमप्रकाश वाल्मीकि "जूठन" (1997) राधा कृष्णन प्रकाशन, नई दिल्ली
5. ओमप्रकाश वाल्मीकि "जूठन" (1997) राधा कृष्णन प्रकाशन, नई दिल्ली